शोध-चिंतन पत्रिका: विद्वानों द्वारा पुनरीक्षित ई शोध पत्रिका
वर्ष: 3, अंक:4; जनवरी-जून, 2022
पृष्ठ संख्या : 117-126

शंकरदेव पर आधारित उपन्यास 'धन्य नर तनु भाल': एक अवलोकन

✍ **यीशुरानी चाङमाइ**

शोध-सार :

'धन्य नर तनु भाल' असमीया साहित्य के उज्ज्वलतम नक्षत्र स्वरूप प्रसिद्ध साहित्यकार सैयद अब्दुल मालिक का एक महत्वपूर्ण उपन्यास है। वे केवल उपन्यासकार ही नहीं अपितु कहानी, कविता, नाटक, निबंध, हास्य-व्यंग्य एवं भ्रमण कहानी आदि लेखन में भी उनका महत्वपूर्ण योगदान रहा है। अपनी लेखनी के द्वारा भाषा, दर्शन और समसामयिक जीवन के प्रति उनकी दृष्टि पाठक वर्ग को प्रभावित किए बिना नहीं रहती। असमीया साहित्य जगत में शंकरदेव की जो विशिष्ट भूमिका रही है, वह कभी भी भुलायी नहीं जा सकती। शंकरदेव ने लगभग 80 से अधिक ग्रंथ लिखकर असम के जनमानस पर प्रभाव विस्तार किया था। उनकी प्रत्येक रचना व्यक्ति के अंत:स्थल तक प्रवाहित होती हुई मानस पटल पर भावों का उद्वेग करती है। आपकी लेखनी में कुछ ऐसी शक्ति एवं कुछ ऐसे तत्व निहित हैं, जिनसे पाठक वर्ग केवल आनंदित ही नहीं, अपितु भाव विभोर हो जाते हैं। पाठक अपने हृदय में गंभीर मानव प्रेम और नवीन चिंतन के हिलोरे उठते हैं। प्रायः 61 से भी अधिक उपन्यासों में मानव प्रेम का बीजवपन कर अपनी अलग पहचान बना ली है। विविधता की दृष्टि से उनके उपन्यास आपके प्रखर पांडित्य को दर्शाते हैं। उनका उपन्यास 'धन्य नर तनु भाल' एक जीवनीमूलक उपन्यास है, जिसका नायक हैं महापुरुष शंकरदेव। श्रीमंत शंकरदेव पर आधारित यह उपन्यास कई मायनों में विशेष है। इस उपन्यास में उनकी दार्शनिकता, आध्यात्मिकता व रहस्यात्मकता का सुंदर समन्वय हुआ है।

बीज शब्द: *उपन्यास, धन्य नर तनु भाल, जीवन-दर्शन*

प्रस्तावना :

असमीया साहित्यकार सैयद अब्दुल मालिक द्वारा लिखित जीवनीमूलक उपन्यास 'धन्य नर तनु भाल' महापुरुष श्रीमंत शंकरदेव के जीवन-दर्शन को हमारे सामने प्रस्तुत करता है। बचपन से

लेकर मृत्यु तक शंकरदेव का सम्पूर्ण जीवन वृतांत का दस्तावेज प्रस्तुत करता हुआ यह उपन्यास लोगों के मन में मानव प्रेम के साथ भक्ति भाव की एक निरंतर धारा प्रवाहित कराता है। समाज में आजकल प्रायः निःशेष होनेवाली कुछ प्राचीन संपदाओं के बारें में भी उपन्यासकार इस उपन्यास में विस्तार से वर्णन करते हैं। एक महापुरुष को महापुरुष कहलाने योग्य बनाने वाले सभी प्रकार के तत्वों का सुंदर परिपाक इस उपन्यास में हुआ है। यह उपन्यास तत्कालीन समाज में ब्राह्मण और शूद्र के बीच संबंध और साथ ही राजा-महाराजाओं की प्रवृत्ति पर गंभीर आलोकपात करते हुए धर्म और संस्कृति जगत में शंकरदेव के आविर्भाव का सम्पूर्ण वृत्तान्त प्रस्तुत करता है। इस उपन्यास में उपन्यासकार बहुत ही रोचक ढंग से शंकरदेव का बचपन हमारे समक्ष रखते हैं। सम्पूर्ण उपन्यास रसपूर्ण है और इसे पढ़ते हुए पाठक कभी भी उबाऊपन महसूस नहीं करते। उपन्यासकार बीच-बीच में प्रकृति की सुंदरता की तरफ हमारा ध्यान आकृष्ट कर लेते हैं,जिससे हमारा मन भी उस सुंदरता में कल्पना को बुनने लग जाता है। तत्कालीन समय में प्रकृति की अपूर्व सुंदरता का वर्णन शंकरदेव तथा उनके साथियों के माध्यम से उपन्यासकार ने बहुत ही सुंदरता से प्रस्तुत किया है।

उपन्यासकार ने 'धन्य नर तनु भाल' में उन सभी कारणों पर भी प्रकाश डाला है, जिनके कारण शंकरदेव ने अपने समाज को विभिन्न प्राचीन परंपराओं से मुक्त कराने का प्रण लिया था। उनके जैसे विद्वान दुर्लभ हैं, जो स्वयं पढ़ने के दौरान शास्त्रों की जटिल बातें समाज के पिछड़ी श्रेणी तक पहुँचाते थे।

भारतीय भक्ति आंदोलन के समय उत्तर और दक्षिण भारत में धर्म और संस्कृति जगत में जिसप्रकार एक नया वातावरण और परिवेश का सृजन हो रहा था, असम में भी एक नये भावबोध समाज में पैदा होने लगा था। बाद में महापुरुष श्रीमंत शंकरदेव के जरिए इसकी स्वीकृति नव वैष्णव धर्म के नाम से मिलती है। धार्मिक लोकगाथा जो पहले संस्कृत आदि कठिन भाषा में रची हुई थी, अब यह जनसाधारण की भाषा में रची जाने लगी। धर्मशास्त्र की जटिलता से साधारण जनता को मुक्त कराने के पक्ष में शंकरदेव का योगदान बहुमूल्य साबित हुआ। उनके माध्यम से ही भाषा की जटिलता, शास्त्रों के जटिल अर्थों का निराकरण हो पाया। इसके पश्चात शास्त्रों के गूढ़ अर्थ लोक-साहित्य, लोक- चिंता, लोक-संस्कृति और लोक-दर्शन में सरलता से समाहित होने लगे।

शंकरदेव के माता पिता बचपन में ही उन्हें छोड़कर स्वर्ग सिधारे। अपनी दादी के साथ उनका जीवन अत्यंत संघर्षपूर्ण रहा। अपनी बूढ़ी दादी खेरसुती जो शंकरदेव के पालन-पोषण में अपना कोई भी कसर नहीं छोड़ा। आज उनके त्याग व कष्ट से ही महापुरुष शंकरदेव जन-जन के हृदय में विराजमान हैं।

अध्ययन की पद्धति

प्रस्तुत अध्ययन की पद्धति विश्लेषणात्मक है। आधार ग्रंथ के अतिरिक्त एक सहायक ग्रंथ का उपयोग किया गया है। ग्रंथसूची तथा उद्धरणों की प्रस्तुति में एमएलए के छठे संस्करण को अपनाया गया है। प्रस्तुत पत्र में असमीया उद्धरणों के लिप्यंतरण में असमीया 'য' के लिए हिन्दी में भी 'य' रखा गया है। असमीया 'য' के 'ज' वाले उच्चारण के लिए लिप्यंतरण में 'य़' रखा गया है। बाकी वर्णों का लिप्यंतरण हु-ब-हु रूप में किया गया है।

विश्लेषण एवं निर्वचन :

'धन्य नर तनु भाल' में तत्कालीन समाज का यथार्थ चित्रण किया गया है। तब समाज का ढाँचा लोगों को विभिन्न श्रेणियों में विभाजित करता था। ब्राह्मण, शूद्र, वैश्य आदि सभी के कर्म और वृत्ति जन्मानुसार ही अलग-अलग रूप से निर्धारित होती आ रही थी। लेकिन इसी व्यवस्था के विरुद्ध शंकरदेव ने धर्म को सभी श्रेणी के लोगों तक पहुँचाने का कार्य किया। ईश्वर सभी के लिए हैं और वह धर्मशास्त्र भी सभी के लिए हैं। जिस श्रेणी के लोग कृषि कार्य, व्यापार, आदि के द्वारा उच्च वर्ग की लोगों तक जीने का साधन उपलद्ध करवाते थे, ऐसे एक श्रेणी को धर्म शास्त्र से दूर रखना उचित नहीं है। शंकरदेव केवल एक जाति व संप्रदाय के लिए नहीं, अपितु सभी के लिए कुछ करना चाहते थे;जिसका अंश सभी को समान रूप से प्राप्त हों। भक्त को एक नवीन सत्य के पथ पर अग्रसर कराने के लिए शंकरदेव ने कई त्याग किये। उनके द्वारा निर्माण किया गया यह वैष्णव धर्म कृषक, दरिद्र, निरक्षर, साधारण श्रम जीवी लोगों के लिए सत्य के पथ का अन्वेषण करता है। उपन्यासकार

सैयद अब्दुल मालिक द्वारा लिखित इस उपन्यास में शंकरदेवकालीन समस्त परिवेशों को रेखांकित किया गया है।

सामाजिक परिस्थिति :

श्रीमंत शंकरदेव के समय हिन्दू धर्म विकास की चरमसीमा पर था। हिन्दू धर्म के प्रवर्तक ब्राह्मण- पुरोहितों के द्वारा देश के राजा-महाराजा भी अपने सभी धार्मिक कर्म करवाते थे। फलस्वरूप राजा हो या प्रजा, सभी के घरों में हिन्दू धर्म के रीति-रिवाज को लोकप्रियता मिली। देश के ऐसे वर्ग जो श्रमजीवी थे ,वे भी उन ब्राह्मणों की भूमि पर कृषि कार्य करके अपने परिवारों को किसी प्रकार चलाते थे। फलस्वरूप यह भूमिहीन कृषक वर्ग उन ब्राह्मणों का आज्ञाकारी हो गया । इसप्रकार उन दरिद्र कृषकों को भी ब्राह्मणों द्वारा गढ़े गये हिन्दू धर्म को स्वीकार करना पड़ा था, जिसके कारण किसी भी धार्मिक कार्य को करना उन कृषकों के लिए आवश्यक हो जाता था । उन खेतिहर मजदूर तथा दरिद्र लोगों को अपने परिवार के किसी सदस्य के मृत्युपरांत उनकी आत्मा की शांति के लिए अनेक दान-दक्षिणा ब्राह्मणों को देना पड़ता था। अपने मृत व्यक्ति की आत्मा की सद्गति के लिए परिवार के व्यक्तियों को सोलह प्रकार के द्रव्य दान में देने पड़ते थे । कम परिमाण में ही सही लेकिन बिना यह सब दिए कोई मृतक का कर्म पूरा नहीं माना जाता था। इसप्रकार भूमि, गाय आदि सभी को दानस्वरूप देकर यह कृषि से जुड़े गाँव के दरिद्र जन क्रमश: अधिक दरिद्र होते जाते थे ।

शंकरदेव की चिंता का प्रमुख कारण था समाज में प्रचलित अंधविश्वास। ब्राह्मणों के द्वारा गाँव के तथा अन्य बहुत सारे लोग मृतकों की पूजा पार्वण करवाते हैं। इन सब कार्य के प्रति शंकरदेव की धारणा अलग थी। शंकरदेव ने देखा कि ये दरिद्रता में जी रहे लोग वाकई इतनी समस्या में जी रहे हैं, किसी तरह दो जून का खाना जुटा पा रहे हैं। इसके उपरांत यदि वे अपनी शेष संपत्ति भी इस प्रकार ब्राह्मणों को दान देते रहे, तो उनका उनके लिए जीना दुरूह हो जायेगा शंकरदेव का मानना था कि अपनी सारी संपत्ति देकर ब्राह्मणों को अमीर बनाने से मृत और जीवित लोगों का मंगल संभव नहीं हो सकता।

शंकरदेव की प्रखर प्रतिभा, उदार व्यक्तित्व, गहरी निष्ठा व एकाग्रता के बल पर उन्होंने अत्यंत कम उम्र में हिन्दू दर्शन, तर्कशास्त्र, साहित्य, अलंकार शास्त्र और व्याकरण के ज्ञान प्राप्त कर लिए थे। उस समय समाज भी जाति पर आधारित था। अर्थात विद्वान-पंडित-ब्राह्मण आदि का समाज अलग था और अन्य लोगों का समाज अलग। महिलाओं को तो टोलों में प्रवेश करने और शास्त्रों की बात सुनने तक की मनाही थी। ब्राह्मणों का काम पूजा-पार्वण, मृतकों का प्रेत-क्रम करना और हिन्दू धर्मानुसार सम्पन्न शादी-ब्याह में होम-यज्ञ आदि करवाना था। विद्वान समझकर इन ब्राह्मणों के प्रति लोग पर्याप्त मान-सम्मान भी रखते थे। राज्य के राजा-महाराज तथा सामंती शासकों के बीच भी उनका प्रभाव कुछ कम नहीं था।

तत्कालीन समय में शंकरदेव की आप्राण प्रचेष्टा और कर्तव्यपरायणता के बल पर गाँव की साधारण जनता की समस्याओं का निराकरण हुआ। समाज में ब्राह्मणों का प्रभाव इतनी ज्यादा हावी हो गया था कि समाज के निम्न श्रेणी के लोग सदा ही धार्मिक रीति-रिवाजों में उलझे रहने लगे। शंकरदेवकालीन इसी परिस्थिति के संबंध में प्राध्यापक भूपेंद्र रायचौधारी कहते हैं-

> सामाजिक जीवन में सबसे अधिक सम्मान ब्राह्मणों को प्राप्त था। धार्मिक रीति-रिवाजों के अधिकारी होने के पतिरिक्त वे विज्ञान एवं कला की चर्चा भी करते थे। वे राज पुरोहित और राजकवि होने के अतिरिक्त मंत्री तथा उच्चतम राज अधिकारी भी होते थे।(रायचौधरी 1997:10)

ऐसी एक विकट परिस्थिति में शंकरदेव ने नव वैष्णव धर्म के प्रवर्तन से इस समाज में नयी रोशनी बिखेरने का काम किया। उन्होंने एक नये चिंतन , नयी विचारधारा के साथ समाज को एक वृहद् जीवनादर्श के अनुगामी बनाने का काम किया। इस प्रकार सर्व साधारण के हृदय व मन में वे हमेशा के लिए अपना स्थान बना लिया।

धार्मिक परिस्थिति :

शंकरदेव को उन सभी धार्मिक कर्मकांड से साधारण लोगों को मुक्ति दिलाना था। ताकि गाँव के गरीब लोग ब्राह्मणों के पल्ले पड़कर अपने जीवन को नष्ट न दें । उच्च-निम्न के भेदभाव से बने रहने से ही ब्राह्मण उन सरल कृषिजीवी लोगों पर अपना प्रभाव विस्तार करने में सक्षम हुए थे। निरक्षर ग्रामीण लोगों तक शास्त्रों की जटिल बातों को सहज रूप से पहुँचाने के लिए शंकरदेव ने

'एक शरण हरिनाम धर्म' की प्रतिष्ठा की । इस धर्म के अनुसार न कोई बड़ा है, न कोई छोटा; न कोई शिक्षित, न अशिक्षित। इसमें मूर्ति पूजा नहीं है, दान-दक्षिणा आदि देने का भी प्रावधान नहीं है; सिर्फ भगवान की शरण में अपनी भक्ति निवेदित करना ही इस धर्म का लक्ष्य है।

शंकरदेव के अनुसार कोई भी धार्मिक व्यक्ति का यह लक्ष कदापि नहीं हो सकता कि वे अन्य धर्म पालन करनेवालों के प्रति शत्रुता का भाव रखे। शंकरदेव के धर्म के ऐसे विचारों से क्रोधित होकर ब्राह्मणों ने उनके धर्म के प्रति भी विरोध की अग्नि जलायी थी। ऐसा नहीं था कि सभी ब्राह्मण उनके विरोधी थे ; कुछ ब्राह्मण ऐसे भी थे, जो उनके प्रति बहुत आदर रखते थे। अपनी तर्कशीलता व बुद्धिमत्ता से शंकरदेव उन ब्राह्मणों को बताया था-

> आमि वैष्णबे मूर्ति पूजा नकरो, पूजार नामत बलि दि जीव बध नकरो, कोनो बिग्रहक संतुष्ट करिबर कारणे खाद्य बस्तु अर्पण नकरो। जीवक हत्या करिले पुण्य नहय, रक्षा करिलेहे पुण्य हय। जीवर प्रति सदय आचरण कराटो भाल ने, जीवहिंसा कराटो, निष्ठुर आचरण कराटो भाल? (मालिक 2022:269)

अर्थात, हम वैष्णव मूर्ति पूजा नहीं करते, पूजा के नाम पर बलि देकर जीव का बध नहीं करते । कोई भी विग्रह को संतुष्ट कराने हेतु खाद्य बस्तु अर्पित नहीं करते । जीव की हत्या करने से नहीं, रक्षा करने से ही पुण्य की प्राप्ति होती है। जीव के प्रति नम्र आचरण करना अच्छा है या जीव के प्रति हिंसा करना या निष्ठुर आचरण करना अच्छा है?

भगवान और देवी-देवों को संतुष्ट करने के लिए निर्दोष प्राणी की हत्या करना कहा तक शुभकारी है। भगवान कभी नहीं चाहते कि उन्हें संतुष्ट करने हेतु उन्हीं के द्वारा सृजन किये गये प्राणी की हत्या हो। कोच राजा नरनारायण के द्वारा जब कामाख्या मंदिर की स्थापना हुई थी, तब भी प्रायः एक सौ चालीस लोगों को देवी के सामने बलि चढ़ा दी गयी। इसप्रकार जब हयग्रीव माधव मंदिर को नवीन रूप में प्रतिष्ठा की गयी थी, तब भी कई बलि चढ़ा दी गयी थी। देवी को प्रसन्न करने के लिए इसप्रकार जीवित मनुष्यों को बलि पर चढ़ाना कहाँ से धर्म व पुण्य का काम कहलायेगा। शंकरदेव कहते हैं-

देवीक संतुष्ट करिबर कारणे पुजारिए ये अन्य मानुहक बलि दियाय, देवीर परम भक्त हिसापे देवीर आगत निजे बलि नायाय किय? (मालिक 2022:269)

अर्थात, देवी को संतुष्ट करने के लिए ये पुजारी जो अन्य व्यक्तियों को बलि पर चढ़ाते हैं, देवी के परम भक्त होने के नाते वे स्वयं बलि पर क्यों नहीं चढ़ जाते ?

शंकरदेव का वैष्णव धर्म :

अत्यंत दयालु, उदार, निर्भीक व्यक्तित्व सम्पन्न महापुरुष श्रीमंत शंकरदेव ने सामाजिक सद्भाव, धार्मिक सहिष्णुता से समाज को एक सही दिशा प्रदान करने के लक्ष्य से ही वैष्णव धर्म की स्थापना की थी। महापुरुष श्रीमंत शंकरदेव के धर्म को एकशरण हरिनाम धर्म, नाम धर्म, भागवत या भागवती धर्म, महापुरुषीया धर्म, एकशरण भजन हरिनाम धर्म, नव वैष्णव धर्म और भक्ति धर्म आदि नामों से जाना जाता है। अनंत ब्रह्मांड की सृष्टिकर्ता, प्रलय आदि की रक्षाकर्ता सर्व अवतार रूपी जो एक नारायण हैं, वे ही सर्वश्रेष्ठ हैं और उन्हीं का शरणागत होना शंकरदेव के धर्म का मूल सिद्धांत है।

इस उपन्यास में उपन्यासकार ने शंकरदेव के नव-वैष्णव धर्म से जुड़े सभी आदर्शवादी तत्वों का वर्णन किया है। उनके द्वारा प्रवर्तित नाम धर्म में भक्ति ही प्रमुख बिन्दु हैं, जातिभेद, वर्ण-विचार, स्त्री-पुरुष, अमीर-गरीब के बीच कोई भेदभाव नहीं है। इस कलियुग में भी नाम का ही महत्व है। यद्यपि इस कलियुग में ही अनैतिकता, भ्रष्टाचार, लोभ, मोह, काम, क्रोध आदि का प्रभाव ज्यादा है फिर भी नाम कीर्तन आदि के द्वारा संसार के बंधन से मुक्त हो सकते हैं। सत्य, त्रेता, द्वापर युग में जो फल पूजा पार्वण, यज्ञ, ध्यान आदि के द्वारा मिला था कलियुग में भगवान विष्णु के नाम-कीर्तन से उस फल की प्राप्ति होती है। लोगों के जात-पात का विचार न करते हुए समाज के अवहेलित, अत्यंत निम्न रूप से परिचित होते आ रहे उन साधारण लोगों के महत्व को भी अपने शुद्ध मन से स्वीकारते थे और उनके प्रति श्रद्धा निवेदित करते थे । मनुष्य की देह और मन की पवित्रता ही समाज के लिए कुछ अच्छा करने को प्रेरित करती है, योग्यता प्रदान करती है। चरित्र और मन की ऊंचाई ही मनुष्य को मानवीय शक्ति की अधिकारी बनाती है, वंश गौरव नहीं। शंकरदेव के अनुसार-

> नाम धर्मत सकलो भकतर समान अधिकार आछे। नाम धर्मई सकलो भकतके समान मर्यादा आरु समान अधिकार दिये। ईश्वरर नाम कीर्तन करात कोनो जाति अजाति नाइ।(मालिक 2022:451)

अर्थात, नाम धर्म में सभी भक्तों का अधिकार समान है। नाम धर्म सभी भक्तों को समान मर्यादा और समान अधिकार प्रदान करता है। ईश्वर के नाम-कीर्तन करने के लिए कोई जाति-अजाति का प्रश्न नहीं आता है।

उपन्यासकार ने इस उपन्यास के कई अध्यायों में माधवदेव के साथ शंकरदेव के साक्षात्कार का भी वर्णन किया है। असम के दो पुरोधा व्यक्ति शंकरदेव और माधवदेव ने एक साथ वैष्णव धर्म का प्रचार व प्रसार किया। माधवदेव भी पहले घोर शाक्त पंथ के अनुयायी थे। उन्होंने भी मूर्ति पूजा, देवी पूजा, बलि विधान आदि मानते थे । परवर्ती समय में वे इन सब की निरर्थकता समझते हुए माधवदेव कहते हैं-

> गुरुजनार असाधारण शास्त्र ज्ञान आरु युक्तिर सम्मुखत हार मानि मइ तेराक गुरु बुलि स्वीकार करिछो आरु पूजा पार्वण, बलि विधान, मूर्ति पूजार असार्थकता बुजिब पारि निराकार निरंजन अनादि अनंत, निर्गुण नियंता कृष्ण भगवानर ओचरत निजके समर्पण करिछो।(मालिक 2022:267)

अर्थात, गुरु शंकरदेव के असाधारण पांडित्य, शास्त्र-ज्ञान और तर्क के सामने हार मानते हुए मैं उन्हें गुरु स्वरूप स्वीकार करता हूँ। पूजा-पार्वण, मूर्ति-पूजा, बलि-प्रथा आदि की निरर्थकता समझकर निर्गुण निराकार, अनादि अनन्त भगवान कृष्ण के समक्ष स्वयं को समर्पित करता हूँ।

वैष्णव मतवाद के प्रवर्तक श्रीमंत शंकरदेव पर कई सारे आरोप लगाये गये । उस समय ब्राह्मणों का काम था कि किस प्रकार राजसभा में शंकरदेव को दोषी ठहराया जाएँ। ब्राह्मणों में से श्री राम भट्टाचार्य, कविराज मिश्र, ब्रह्मानन्द भट्टाचार्य आदि शंकरदेव के घोर विरोधी थे। जब से शंकरदेव ने वैष्णव धर्म का प्रवर्तन किया तब से साधारण निरक्षर लोग उस धर्म के प्रति आकर्षित होते रहे । यह समय ब्राह्मणों के लिए भी अत्यंत चुनौतीपूर्ण साबित हुआ। इसप्रकार राजा के पास जाकर शंकरदेव के विरुद्ध आपत्ति दर्शाने के सिवाय उनलोगों के पास और कुछ रास्ता बचा ही नहीं। ब्राह्मणों का मानना यह था कि समाज के सभी प्राणी का बँटवारा जन्म के अनुसार होता है और

जन्म के अनुसार शंकरदेव को धर्म शास्त्र की व्याख्या करने का भी अधिकार नहीं है। वे यह भी कहते हैं कि शंकरदेव हम जैसे ब्राह्मणों का विरोध कर रहे हैं । वे अपना एक शरणीया नाम धर्म स्थापित कर समाज में सभी जाति के लोगों को एक करना चाहते हैं, शास्त्र की बातों को सभी साधारण जनों तक पहुँचाना चाहते है, समाज में देवी-देव की पूजा, मूर्ति-पूजा आदि में भी बाधा डाल रहे हैं। राजसभा में शंकरदेव पर मामला भी चलता है। परंतु अत्यंत उदार, दयालु, मानवीय गुणसंपन्न इस महापुरुष की वाणी को सुनकर राजा भी इनका विरोध नहीं कर पाते और अंततः राजा स्वयं उनकी प्रशंसा करने लग जाते हैं।

निष्कर्ष :

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर कहा जा सकता है कि समाज को सुधारने में, पीढ़ी से पीढ़ी तक संस्कृति को प्रसारित करने में तथा एक सार्वभौमिक भातृत्वबोध की नींव स्थापित करने में शंकरदेव का योगदान प्रमुख्य है। तत्कालीन समाज में समस्त समुदाय पर इनका प्रभाव रहा है तथा इनके योगदान से ही धार्मिक, सामाजिक व सांस्कृतिक रूप से समाज को एक नई ऊर्जा मिली। सैयद अब्दुल मालिक का यह उपन्यास भक्ति रस से सराबोर तथा श्रीमंत शंकरदेव की ओजस्वी व्यक्तित्व और धार्मिक सद्भावना से परिपूर्ण एक आदर्शमूलक उपन्यास है। उपन्यास में उपन्यासकार ने एक महापुरुष के जीवन-दर्शन को जिस प्रकार वर्णन किया है, उससे पाठकों के हृदय में उनके प्रति एक धार्मिक सद्भाव और प्रेम का भाव जन्म लेता है। उपन्यासकार नाम धर्म की महत्ता के बारें में लोगों को बताने का प्रयास करते हैं और साथ ही सामाजिक विषमताओं, धार्मिक पाखंडों का नाश नाम धर्म के जरिए कैसे किया जा सकता इसका भी उल्लेख किया है। उपन्यासकार नव वैष्णव धर्म के प्रवर्तक शंकरदेव की वाणी के द्वारा समाज में एक सुखद वातावरण का निर्माण करना चाहते हैं। उपन्यासकार ने इस उपन्यास में शंकरदेव का जनसाधारण के प्रति मानवीय मूल्यों से संपृक्त उदार व्यक्तित्व को दिखाया है। अपनी धार्मिक निष्ठा के जरिए सर्वसाधारण लोगों तक सकारात्मक ऊर्जा के साथ गंभीर मानवतावादी चेतना प्रवाहित करने में असम के इस महान गुरु का स्थान अन्यतम है। तत्कालीन समाज में फैले सामाजिक व धार्मिक पाखंडों को समूल रूप से खत्म करने के लिए उनका योगदान अतुलनीय है। इस उपन्यास में उपन्यासकार ने शंकरदेव के जीवन से जुड़े समस्त पहलुओं को बहुत ही गहराई से उद्भासित किया है। समाज की नकारात्मक शक्तियों के विरुद्ध यह

उपन्यास सद्भाव का संदेश देता है। अतः लोग उनके वृहद् जीवनादर्श को सामने रखकर उस समय के चिंतन का पुनरविश्लेषण करते हुए आज के समाज में धार्मिक सहिष्णुता व एकता का वातावरण निर्माण करने में भी सक्षम होंगे।

ग्रंथ-सूची :

मालिक, सैयद अब्दुल.धन्य नर तनु भाल.सप्तम.गुवाहाटी: स्टूडेंट्स स्टोर्स,2022.

रायचौधरी, भूपेंद्र. शंकरदेव और तुलसीदास की वैचारिक भावभूमि.प्रथम.गुवाहाटी:भारतीय संस्कृति परिषद, 1997.

\

संपर्क सूत्र:
पीएच.डी शोधार्थी
गौहाटी विश्वविद्यालय
मोबाईल-6002485654
ई-मेइल: jishurani1@gmail.com